सप्तरी, नेपाल। माउण्ट आबू की वरिष्ठ राजयोग शिक्षिका ब्र.कु.उषा को अभिनंदन पत्र भेंट कर सम्मानित करते हुए नेपाल की निदेशिका ब्र.कु.राज तथा अन्य।

राजकोट। 'डायबिटिज कैम्प' का उद्घाटन करने के पश्चात् समूह चित्र में हैं भाजापा प्रमुख दिनेश भाई परसाना, सरपंच चंदू भाई, ब्र.कु.रमा बहन तथा अन्य।

राजसमंद। 'तनावमुक्ति प्रबंधन' विषय पर आयोजित कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए ब्र.कु.रीटा तथा मंचासीन हैं पुलिस अधीक्षक राहुल कोटकी, प्रदीप मोहन, ब्र.कु.पूनम बहन।

रैरंगपुर। 'परमात्म शक्ति द्वारा स्वर्णिम संसार' कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए मंत्री सरोजनी हेमब्रम तथा मंचासीन हैं पूर्व विधायिका सवित्री, क्षेत्रिए संचालिका ब्र.कु.रानी तथा अन्य।

सेंधवा। आध्यात्मिक परिचर्चा में भाग लेते हुए राज्यमंत्री मनोहर उंटवाल, भाजापा जिला अध्यक्ष एस.वीरास्वामी, अरूण चौधरी एवं ब्र.कु.छाया बहन।

सोलापूर। विधायक प्रणिती ताई शिंदे को फूलों का गुलदस्ता भेंट कर सम्मानित करते हुए ब्र.कु.योगिता बहन तथा अन्य।

चित्त, चिंता व चिंतन

ब्र.कु.गुणवंत पाटील...

मन को लुभाने वाले को 'चित्तचोर' कहते हैं। चित्त की परिभाषा करना कठिन है। चित्त, मन व हृदय इन दोनों की सम्मिलत अभिव्यक्ति का नाम है। यह कवि की कल्पना नहीं बल्कि व्यक्ति के अपूर्व प्यार का दिव्य दर्पण है। यह दर्पण इतना सुंदर और सुहाना है कि उसकी हमेशा ही चोरी होती आई है। इसलिए चित्त को बड़ा संभालना पड़ता है। चित्त अनंत शक्तियों का अखुट खजाना है। चित्त जब मन के रूप में प्रकट होता है तो वह संकल्पों का संतत स्रोत बन जाता है। मन को अगर समय पर वश में नहीं किया तो मन में उत्पन्न हुए असंख्य संकल्प-विकल्प ईश्वरीय कार्य में तथा प्राकृतिक नियमों में बाधा बन सकते हैं। इसलिए मन रूपी घोड़े पर सवार हो जाओ, उसे अपने ऊपर हावी न होने दो।

व्यर्थ संकल्प, विकल्प मनुष्य को भटकाते हैं। मन में पैदा हुआ 'मान' मैंपन को जन्म देता है। फिर यह 'मैंपन' मन का मालिक बन उसे गुलाम की तरह दौड़ाता है, थकाता है। व्यर्थ और अशुभ संकल्पों की तो जैसे फौज ही बन जाती है। ये संकल्प बोझ बनकर इंसान को तंग-परेशान करते हैं। बोझ से लदा व्यक्ति भला आगे कैसे बढ़ सकता है? फिर चिंतायें पनपने लगती हैं। चिंता पर चिंता। चिंता से हमारी जीवन-चेतना ही प्रभावित होने लगती है। थोड़ा-थोड़ा करके यह एक हथौड़ा बन जाता है, जो हमारी बुद्धि के टुकड़े-टुकड़े कर हमारी क्षमता को समाप्त कर देता है। मनुष्य श्रम करने से इतना नहीं थकता जितना की चिंता करने से। परिश्रम तो स्वास्थ्य देने वाली संजीवनी है। एक अभिनेत्री का अनुभव कहता है कि चिंतायें सर्व प्रकार की सुंदरता को समाप्त कर देती है। चिंता हमारे चित्त का विवेक नष्ट कर व्यक्ति को हलचल में ले आती है। ऐसे व्यक्ति की हालत 'पल में तोला, पल में मासा' जैसी हो जाती है। अत: चिंता को हावी होने से पहले ही उसे प्रभु हवाले कर देना चाहिए। यह मत भुलो कि स्वयं प्रभु हमारी चिंता करता है।

महाभारत में एक प्रसंग है। कौरव-पाण्डवों के युद्ध के समय एक रात अर्जुन अपने शयनकक्ष में निश्चिंत रूप से सो रहे थे। और श्रीकृष्ण पहरे पर खड़े थे। अर्जुन को बड़े आराम से सोते हुए देख श्रीकृष्ण आश्चर्यचकित हुए। अगले दिन सुबह उन्होंने अर्जुन से इसका कारण पूछा तो अर्जुन ने कहा - ''स्वयं भगवान जिसका रक्षक है, उसे भला किस बात की चिंता और किस बात का भय।''

दुनिया में लोगों को कदम-कदम पर चिंता है। परन्तु ब्राह्मण आत्माओं के हर संकल्प में परमात्म चिंतन है। इसलिए स्वयं भगवान हमें 'बेफिक्र बादशाह' का किताब देते हैं। हम ब्राह्मण आत्माओं के लिए चिंता भला किस बात की?

सच तो यह है कि चिंता को शुभ-चिंतन में परिवर्तन करना ही विवेक है। इसलिए बुद्धि को दिव्य बनाना आवश्यक है। यह दिव्य-बुद्धि व्यर्थ संकल्पों को समर्थता में अर्थात् विवेक में बदल देती है। फिर यह विवेक बुद्धि मन को अनुशासन में रखती है। जिसके फलस्वरूप हमारे संस्कार श्रेष्ठ व सतोप्रधान बन जाते हैं। चिंतन बुद्धि का विषय है। बुद्धि जितनी स्वच्छ, सत्य, पवित्र, दिव्य व स्थिर होती है, उतना ही हमारा चिंतन गहन व शक्तिशाली होता है। विवेक सम्पन्न चिंतन हमारे श्रेष्ठ कर्मों का आधार है। उन्हीं श्रेष्ठ कर्मों से श्रेष्ठ संस्कारों का निर्माण होता है। संस्कार ही मानव चरित्र का मूल आधार है। आध्यात्मिक व्यक्ति अपने जीवन में प्रवृत्ति को कम नहीं करता अपितु वृत्ति को कम करता है।

शुभ चिंतन से आत्म-निर्भरता आती है। जो चित्त को एकाग्र करती है। चित्त की यह एकाग्रता ही मन की चंचलता पर अंकुश लगाती है। चिंतन से हम विघ्न मुक्त हो जाते हैं। आत्म-निर्भरता चित्त का सशक्तिकरण करती है। मानव जीवन की श्रेष्ठता, चिंतन की ही उपलब्धि है। समदृष्टि अर्थात् समस्त विश्व के प्रति देखने की विशाल दृष्टि इसी चिंतन से आती है। आत्म-निर्भर व्यक्ति का चरित्र श्रेष्ठ कर्मों की

शेष पृष्ठ 8 पर

आसुरी और दैवी स्वभाव वाले मनुष्यों के लक्षण

गीता के सोलहवें अध्याय में मनुष्य जीवन में दैवी और आसुरी स्वभाव पर पड़ने वाले प्रभाव का वर्णन किया गया है। संसार में सृजित प्राणी दो प्रकार के हैं, एक दैवी स्वभाव के और दूसरा आसुरी स्वभाव के। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में सद्गुणों रूपी दैवी सेना और दुर्गुणों रूपी आसुरी सेना एक-दूसरे के सामने खड़ी है। जिसका रूपात्मक वर्णन वेद में इंद्र और भातृ के रूप में, पुराण में देव और दानव के रूप में, ईसाई धर्म में प्रभु और शैतान के रूप में, इस्लाम में अल्लाह और इब्बीस के रूप में किया गया है। इस तरह से दैवी और आसुरी प्रकृति हर इंसान में मौजूद है। शास्त्रों में जो युद्ध या संघर्ष की बातें कही गई है वो वास्तव में इनके बीच संघर्ष की बात है।

पहले श्लोक से तीसरे श्लोक तक आध्यात्मिक जीवन जीने वाले सुसंस्कृत पुरुष के आदर्श गुण का वर्णन किया गया है। चौथे श्लोक से उन्नीसवें श्लोक तक आसुरी सम्पदा वाले मनुष्यों के लक्षण और उनकी अद्योगति का वर्णन किया गया है। बीसवें श्लोक से चौबीसवें श्लोक तक शास्त्र विरूद्ध आचरण के त्याग और शास्त्रानुकूल आचरण की प्रेरणा को स्पष्ट किया गया है।

इस प्रकार सबसे पहले आध्यात्मिक जीवन जीने वाले सुसंस्कृत पुरुष के

गीता ज्ञान का आध्यात्मिक रहस्य

-वरिष्ठ राजयोग शिक्षिका, ब्र.कु.उषा

आदर्श दिव्य गुणों का वर्णन करते हुए भगवान ने स्पष्ट किया है कि व्यक्ति के जीवन में जब कोई भय नहीं रहता है तब वह अभय बनता जाता है। अंत:करण की शुद्धि, ज्ञान योग में दृढ़ स्थिति, मानसिक स्थिति, दान, इन्द्रियों का संयम, यज्ञ, स्वाध्याय, तपस्या, सरलता, अहिंसा, सत्यता, क्रोध मुक्ति, त्याग, शांति, परचिंतन और परदर्शन से मुक्ति, सर्व के प्रति दया एवं करूणा भाव, लोभ मुक्ति, मृदुता और विनयशीलता, दृढ़ संकल्पधारी, तेज, क्षमा, धैर्य, पवित्रता, ईर्ष्या और सम्मान की अभिलाषा से मुक्ति, ये उसके विशेष सद्गुण और दिव्य गुण होते हैं। जिससे उसके जीवन में आध्यात्मिकता का विकास होता है। सुसंस्कृति उसके संस्कारों में आने लगती है। तो यही उसके सर्व प्रथम लक्षण होते हैं।

उसके साथ ही आसुरी प्रवृति वाले मनुष्य में कौन से अवगुण होते हैं या उसके जीवन में कौन से लक्षण दिखाई देते हैं उसको स्पष्ट करते हुए भगवान कहते हैं कि आसुरी प्रवृति वाले मनुष्य के मत में ये संसार मिथ्या, निराधार और ईश्वर रहित है। जो ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होते हैं। वे यह मानते हैं कि यह संसार कामेच्छा से उत्पन्न होता है और विषय भोग ही उसके जीवन का परम लक्ष्य होता है। ऐसे मनुष्य कभी न तृप्त होने वाली कामनाओं से भरपूर, दंभी, अभिमानी, क्रोधी, कठोर, अज्ञानी और मद से युक्त ,अशुभ संकल्प वाले, मोह ग्रस्त, दुष्ट इच्छाओं में प्रवृत्त रहने वाले, मंद बुद्धि, अपकारी, कुकर्मी होते हैं। ऐसे मनुष्य केवल संसार का नाश करने के लिए ही उत्पन्न होते हैं। उनमें न पवित्रता न उचित आचरण और न ही सत्यता पायी जाती है।

आसुरी प्रवृत्ति वाले लोग लाखों इच्छाओं के जाल में बंधकर विषय उपभोग की पूर्ति के लिए अन्याय पूर्वक धन का संग्रह करना चाहते हैं। जिस कारण उनसे सभी की शत्रुता बढ़ती जाती है और वे शत्रुओं को मारना चाहते हैं। वे इसी भ्रम में जीने लगते हैं कि वह सर्व संपन्न हैं, उपभोगी हैं, सिद्ध पुरुष हैं, बलवान और सुखी हैं ये भ्रम उसके अंदर होता है कि हम जो चाहे कर सकते हैं, हम बलवान हैं। वह सोचता है कि उसके जैसा धनवान कोई नहीं है। श्रेष्ठ कुल में मैं जन्मा हूँ। ऐसे अपने को श्रेष्ठ मानने वाले अहंकार के नशे में चूर रहते हैं। अपने नाम, मान, शान के लिए यज्ञ करते हैं और दान करते हैं अर्थात् दान के पीछे भी उनके मन में अनेक प्रकार की प्राप्ति की इच्छायें समायी रहती है। ये उनके विशेष लक्षण देखे और पाए जाते हैं। इस कारण से वे अनेक प्रकार के जाल में जैसे बंधते चले जाते हैं। अज्ञानता से भ्रमित चित्त वाले, मोह जाल में फंसे, विषय उपभोगों में आसक्त ये लोग घोर अपवित्र कर्म कर, नर्क समान जीवन जीते हैं। अहंकार, बल, पाखण्ड, कामी, क्रोधी, सर्व की निंदा करने वाले, ये मनुष्यत्माओं से भी द्वेष करते और परमात्मा से भी द्वेष करते हैं। ऐसे द्वेष करने वाले कुकर्मी को बार-बार आसुरी प्रवृत्ति वाली योनियां ही प्राप्त होती है। जिसको दूसरे शब्दों में नर्क समान जीवन कहा जाता है। जिसके लिए शास्त्रों में गायन है कि वे नर्क के विष्टा समान कीड़े बन जाते हैं। इसका भावार्थ यही है कि मनुष्य योनि में रहकर उसका जीवन पशु से भी अधिक बदत्तर हो जाता है। भगवान ने नर्क के तीन द्वार बतायें हैं वो है - काम, क्रोध और लोभ। इससे आत्मा का पतन होता है। - क्रमश: